20वीं सदी के पूर्वार्द्ध में राजस्थान में अस्पृश्यता निवारण के प्रयासों पर राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव

– डॉ. उषा व्यास

व्याखाता, इतिहास

राजकीय महाविद्यालय, कोटा

घ–1, साबरमती कॉलोनी

कैथूनीपोल, कोटा, राज.

अस्पृश्यता भारतीय समाज का एक अभिशाप रहा है। इस कुप्रथा के कारण भारतीय समाज का एक बडा हिस्सा सदियों से न केवल दलित और शोषित रहा है बल्कि मानवोचित गरिम और अधिकारों से भी वंचित रहा है। अंग्रेजी शासनकाल में इस कुप्रथा ने अंग्रेज साम्राज्यवादियों को भारतीय समाज में निभेद पैदा करने का एक अतिरिक्त माध्यम प्रदान किया। अतः हिंदू सामाजिक ढांचे को बचने एवं स्वरूप बनने के लिये इस प्रथ को दूर करना आवश्यक बन गया था। इससे हिंदू समाज को मुक्त कराने के प्रयास ब्रिटिश भारत में उन्नसवीं शताब्दी के उत्तर्राद्ध में ही प्रारंभ हो चुके थे। परंतु रियासती भारत में इसके निवारणार्थ प्रयासों को बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ पर ही विशेष बल मिला।

प्रस्तुत लेख का अध्ययन क्षेत्र पूर्वी राजपूताना के चार राज्य हैं भरतपुर अलवर, धौलपुर एवं करौली। इन्हें मिलाकर 1948 मत्स्म क्षेत्र बनाया गया था। शेष भारत की ही तरह मस्त्य क्षेत्र के इन राज्यों में भी अस्पृश्यता की प्रथ विद्यमान थी। करौली राज्य में 1932–33 में 22,481 अछूत थे। राज्य में निजी और सरकारी सैंकडों मंदिर थे लेकिन उनमें से एक भी हरिजनों के लिये खुला नहीं था। ये लोग भी हिंदू थे, उन्हें पूजा के अधिकार से वंचित करना पूर्णतः अन्यायपूर्ण और आत्मघाती था। हरिजनों के बच्चों को स्कलों में प्रवेश नहीं दिया जाता था। एक विद्यालय खोला भी गया परंतु उसे भी स्वर्ण हिंदुओं के विरोध के कारण बंद कर दिया गया। स्वर्ण हिंदुओं की उपस्थिति में वे घोडे पर नहीं चढ सकते थे, घी से मिठाई नहीं तैयार कर सकते थे और सोने चांदी के आभूषण नहीं पहन सकते थे। अलवर और भरतपुर राज्यों में भी अस्पृश्यों की स्थिति दयनीय थी। यहां भी वे किसी सवारी, तांगे या घोडे पर नहीं बैठ सकते थे, छाता नहीं लगा सकते थे। घर पर जो धन बनता थ उसे बाजार में बेचने पर प्रतिबंध था। धौलपुर राज्य में भी अछूतों की एक बडी संख्या थी। राजपूताना बोर्ड ऑफ दी सर्वेण्टस ऑफ दी अनटचेबल्स सोसायटी ने धौलपुर राज्य में धौलपुर शहर और आस पास के क्षेत्रों में 9000 अछूतों की दशा का सर्वेक्षण किया था। सर्वेक्षित क्षेत्र में 175 मंदिर थे, लेकिन उनमें से एक भी हरिजनों के लिये खुला नहीं था। यद्यपि उन्हें स्कूलों में प्रवेश दिया जाता था लेकिन वे उंची जाति के हिंदुओं से कुछ दूरी पर बैठने को मजबूतर थे। इस तरह से अस्पृश्यता की सामाजिक रूदिवादिता ने दलितों की जिंदगी को नितानत अमानवीय बना दिया था।

दलितों के इस अमानवीय हालातों में सुधार के लिये क्षेत्र में सर्वप्रथम पहल आर्य समाज ने की। तत्पश्चात कांग्रेस और अन्य सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यकर्ता इस दिशा में सक्रिय हुए। सामाजिक धार्मिक सुधारों का प्रतिपादन करने के लिये आर्य समाज की शाखाओं की स्थापना इन चारों राज्यों में बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में ही हो चुकी थी। आर्य समाज वृहत हिंदू समाज में व्याप्त जाति पांति तथा अस्पृश्यता के दूषित विचारों को दूर करने के लिये प्रारंभ से ही प्रयत्नशील थ। आर्य समाज जन्म के कारण व किसी को उंचा मानता थ और न नीचा। मनुष्य की अस्पृश्यता का विचार आर्य समाज को स्वीकार्य नहीं थ। अतः आर्य समाजी अछूतों व दलितों के उद्वार के लिये तत्पर हुए थे। स्त्रियों और

शुद्धों का भी उनके द्वारा उपनयन कराया जा रहा था और वे भी वेदशास्त्रों के पठन पाठन के अधिकार हैं इस मत्स्य का आर्य समाज के द्वारा प्रचार किया जा रहा था।

अछूतोंद्वार के कार्य को विशेष बल मिला, बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से। देश में राजनीतिक गतिविधियों में तेजी आने के साथ साथ अस्पृश्यता निवारण कार्यक्रमों में भी विशेष प्रगति हुई। अमृतसर कांग्रेस की स्वागत समिति के अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए स्वामी श्रद्धानंद ने कहा मैं आप सब भाई बहिनों से एक याचना करूंगा। इस पवित्र जातीय मंदिर में बैठे हुए अपने हृदयों को मातृभूमि के प्रेमजल से शुद्ध करके प्रतिज्ञा करें कि आज से वे साढे छः करोड हमारे लिये अदूत नहीं रहे, बल्कि हमारे भाई और बहिन है। उनकी पुत्रियां और पुत्र हमारी पाठशाला में बैठेंगे। इस अधिवेशन के पश्चात स्वामी श्रद्धानंद ने स्वयं को कांग्रेस से अलग कर अपनी सारी शक्ति दलितोद्वार, शुद्धि तथा हिंदू संगठन में लगा दी। 1921 में उन्होंने दिल्ली में विधिपूर्वक अछूतोंद्वार सभा की स्थापना की जिसका उद्देश्य दलितों को मानवीय अधिकार दिलाना और उनके लिये ऐसी शालाओं को मानवीय अधिकार दिलाना और उनके लिये ऐसी शालाओं को खोलना था, जिसके द्वारा वे अन्य सभी लोगों के साथ शिक्षा ग्रहण करके सभ्य समाज में उचित स्थान पा सके। इस सभा के कार्य क्षेत्र का क्रमशः विस्तार होने लगा। स्वामी श्रद्धानंद के बलिदान के पश्चात इस सभा का नाम अखिल भारतीय श्रद्धानंद दलितोद्वार सभा कर दिय गया।

समाज सुधार के क्षेत्र में दूसरी महत्वपूर्ण संस्था कांग्रेस थी। 1920 बाद कांग्रेस का नेतृत्व गांधी के हाथ में आया। गांधी हिंदू स्वतंत्रता की घृणित प्रथा अस्पृश्यता के घोर विरोधी थे। गांधी के अनुसार स्वतंत्रता के मूलधारा पर कुठाराघात होता है जब समाज किसी व्यक्ति को उसके धर्म विश्वासों और पूर्वजों के कर्मो, सकी नाक के स्वरूप उसकी चमडी के रंग या उसके जन्मस्थान या सम्पत्ति के आधारों पर समान अधिकारों से वंचित करता है। गांधी की स्वतंत्रता की संकल्पना में हिंदू अनैतिकता के लिये उसी तरह कोई स्थान नहीं थ। जैसे कि ब्रिटिश प्रशासन का। यंग इंडिया के 25 मई 1921 के अंक में उन्होंने लिखा स्वयं अमानवीय होते हुए हम ईश्वर से प्रार्थना नहीं कर सकते हैं कि वह हमें दूसरों की अमानवीयता से मुक्ति प्रदान करें। वह अस्पृश्यता की निंदा करते हुए नहीं थकते थे। उनके शब्दों में अगर कोई यह सिद्ध कर दे कि अस्पृश्यता हिंदू धर्म का अभिन्न अंग है तो कम से कम मैं तो यह घोषण कर ही दूंगा कि मैं हिंदू धर्म का खुल्लम खुला विरोधी हूं। इसलिये गांधी जी ने जहां एक ओर अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष के लिये अहिंसा को हथियार बनाया वहीं उन्होंने अस्पृश्यता निवारण एवं दलित वर्गों की दशा सुधारने की ओर विशेष ध्यान दिया। वैसे भी कांगेस ने देशी राज्यों में सामाजिक पहलू को अधिक महत्व दिया ओर एक अर्ध में उसने 1935 तक राज्यों के राजनीतिक व प्रशासनिक मामलों में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया था। लेकिन वह देशी राज्यों की जनता के सम्पर्क में अवश्य रहना चाहती थी। इसलिये उसने देशी राज्यों में विद्यमान सामाजिक बुराईयों की ओर ध्यान केन्द्रीत किया और दलित वर्गों एवं किसानों की समस्या की ओर ध्यान दिया।

दलितोद्वार के लिये समर्पित हरिजन सेवक संघ राजस्थान में 1935 में अजमेर के निकट नरेली में स्थापित हुआ था। इस संघ की प्रेरणा पर ही अलवर हरिजन सेवक समिति और भरतपुर हरिजन सेवक समिति की स्थापना हुई करोली के चिरंजी लाल शर्मा, अलवर के श्री रामावतार शर्मा और भरतपुर के श्री गोकुल वर्मा इस संघ के निष्ठावान कार्यकर्ता थे।

इसकी वातावरण का प्रभाव मत्स्य क्षेत्र के इन चारों राज्यों पर भी पडा। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में भरतपुर में शुद्धि आंदोलन चलता जिसमें भरतपुर महाराजा के अलावा ठाकुर देशराज, सविल प्रसाद चतुर्वेदी एवं रेवतीरमण शर्मा ने सक्रिय भाग लिया। इसमें स्वामी आनंद प्रकाश ने हिंदू संगठन पर भाषण दिया और दलित वर्गों को हिंदुओं में शमिल करने पर बल दिया। आगरा की शुद्धि सभा आंदोलन का प्रचार करने के लिये अपने कर्मचारियों को भरतपुर भेजती थी। अखिल भारतीय हिंदू शुद्धि सभा ने स्वामी श्रद्धानंद की स्मृति में भरतपुर में एक कोस भी स्थापित किया, जिसके अंतर्ग सारी एकत्रित धनराशि को शुद्धि पर खर्च किया जाना था। स्वामी श्रद्धानंद द्वारा शुद्धि आंदोलन प्रारंभ करने पर भरतपुर

के आर्य समाज के दो दल बन गये थे। एक दल शुद्धि आंदोलन व दलितोंद्वार का पक्ष खुले यप से लेने गा और आर्य समाज के नेतृत्व में ही कार्य करने लगा और दूसरा दल विशुद्ध राजनीति का पक्ष लेने लगा। भरतपुर हिंदी साहित्य समिति की स्थापना करने वाले जगन्नाथ अधिकारी ने 1925 में म्यूनिसपल बोर्ड, भरतपुर का चेयरमेन निर्वाचित होने पर अछूतोंद्वार के कार्य में सक्रियता दिखाई। 1926 में उन्होंने अपना देवालय श्री लक्ष्मण जी का नया मंदिर अछूतों के देव दर्शन के लिये खोल दिया। इन्होंने राज्य में अनेक सभाओं में अछूतों को गले लगाने का सामायिक आव्हान किया। अछूतों को सार्वजनिक कुओं से पानी भरने देने तथा मंदिरों में देव दर्शन करने देने का जनता से अनुरोध किया।

मैकडॉनल्ड के सांप्रदायिक निर्णय के विरूद्ध गांधी के अनशन की प्रक्रिय भरतपुर में भी हुई। यहां 1933–34 में हरिजन आंदोलन का सूत्रपात हुआ। अनेक राष्ट्रीय कार्यकर्ता गांधी जी की सामाजिक क्रांति में कूद पडें इस महायज्ञ में गोकुल जी वर्मा, मास्टर आदित्येन्द्र मास्टर फकीरचन्द, गौरीशंकर मित्तल, रामभरोस लाल वर्मा और अनेक आर्य समाजी कार्यकर्ताओं ने भी भाग लिया।

भरतपुर के प्रशासक हेनकॉक ने भरतपुर के जाटवों को ईसाई बनाने के लिये फरवी 1935 में जबलपुर से पादरियों को बुलवाया था। इसे रोकने के लिये जुझारू सामाजिक कार्यकर्ताओं मास्टर फकीरचंद, मास्टर आदित्येन्द्र, गौरीशंकर मित्तल ने गांवों मे जाकर जाटवों को समझाया और पादरियों का जबर्दस्त विरोध किया और उन्हें भरतपुर से जाने के लिये बाध्य कर दिया। इस स्थिति का निराकरण करने के लिये भरतपुर के कार्यकर्ताओं ने हरिजन सेवक संघ के श्री रामनरायण चौधरी से सम्पर्क किया और उनके निर्देशानुसार भरतपुर में हरिजन सेवक समिति की स्थापना की। समिति के सदस्यों ने गांव गांव जाकर हरिजन कल्याण के लिये प्रशसंनीय कार्य किया। मास्टर फकीरचंद, श्री गोकुल जी वर्मा और मास्टर आदित्येन्द्र ने हरिजनों के बीच में लगभग एक वर्ष तक कार्य किया। उनको शिक्षा प्राप्त करने, कुओं से पानी भरने के अधिकार दिलाने के प्रयास किये। यह घ्ज्ञटना उस कारण के औचित्य को सिद्ध करती है कि न केवल मुसलमान वरन् ईसाईयों की भी आंखे दलित समझी जाने वाली जातियों पर थी। जो स्वामी श्रद्धानंद द्वारा आंदोलन प्रारंभ करने का कारण थी। इस भय ने इस युग में दलितोंद्वार की प्रकिया को तीव्र किया।

करौली में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से जनबल को संगठित करने के लिये 20 मई 1926 को यादववाटी हित बर्द्धक सभा का गठन किया गया। इस सभा द्वारा जो पाठशालाएं खोली गई उसमें अनेक हरिजन बच्चे पढते थे। इस तरह जहां राष्ट्रीय स्तर पर हरिजन सेवा संघ का गठन 1935 को हुआ वहीं करौली में 1925 से ही इस दिशा में प्रयास प्रारंभ हो चुके थे। 1928 में करौली में चार हरिजन पाठशालाओं में थी। जिसमें 100 हरिजन बालक पढते थे। 1930 में विधिवत हरिजन सेवा समिति का गठन किया गया जिसके मंत्री कुंवर शिवराज सिंह थे। शिवराज सिंह ने 1936 में हरिजन आश्रम साबरमती, अहमदाबाद में प्रशिक्षण व अनुभव हासिल किया था ओर 1938 में वे राजस्थान हरिजन सेवक समिति के मंत्री रहे। यह समिति 1942 तक नियमित रही। यह राजस्थान सेवा संघ में आर्थिक सहायता आदि के लिये जुडी हुई थी। हरिजन पाठशालाओं में अध्यापन और संचालन कार्य में सहयोग देने वालों में शिवराज सिंह, हजूर सिंह, थान सिंह, नरसिंहदास गुप्ता श्याम सुंदर शर्मा आदि थे। 1937 में गठित करौली राज्य सेवक संघ ने भी हरिजनों में विद्या के प्रचार प्रसार का विशेष प्रयास किया।

अलवर रियासत में अस्पृश्यता के निवारणार्थ प्रयासों में वहीं के शासक जयसिंह का योगदान रहा। उन्होंने बनारस में 23 अप्रैल 1933 को हुए भारत धर्म महामंडल अधिवेशन में पण्डितों से अपील की कि वे अस्पृश्यता की समस्या का कोई समाधान ढूंढे। अलवर हरिजन सेवक संघ और हिंदू संगठन आंदोलन ने हरिजनों को अपनी स्थिति के प्रति जागरूक बनाने के प्रयास किये। श्री नत्थूराम मोदी, जो प्रजामण्डल के संस्थापक सदस्यों में से थे, ने प्रजामंडल की स्थापना के पहले अपना अधिक से अधिक समय अस्पृश्यता निवारण की प्रवृत्तियों में लगाया। पं. हरिनारायण शर्मा के साथ मिलकर मोदी जी ने कई हरिजन पाठशालाओं का संचालन किया। पं. हरिनारायण शर्मा ने 1923 में अपने परिवार का मंदिर

हरिजनों के लिये खोलकर तहलका मचा दिया। उस समय गणेश लाल, गुलजारी लाल, मास्टर रामावतार और इन्द्र सिंह आजाद आदि मोदी जी के सहयोगी और सहकर्मी थे।

धौलपुर में श्री ज्वालाप्रसाद जिज्ञासु ने राज्यभर में हरिजनोंद्वार के आंदोलन का संचालन किया। अस्पृश्यता की सामाजिक रूदिवादिता के खिलाफ प्रदर्शन और सभाएं आयोजित की गई। इस आंदोलन के कारण अधिकारियों को हरिजन वर्ग के लिये स्कूल की व्यवस्था करनी पडी ताकि उनके बच्चे पढ सके। 1937 में अधिकारियों को सार्वजनिक स्कूलों में हरिजनों के बचचों को दाखिला कराने और उन्हें उचित संरक्षण देने की मांग स्वीकार करने को विवश होना पडा। श्री जिज्ञासु द्वारा प्रारंभ किये गये हरिजनों द्वार आंदोलन ने अन्य बहुत से व्यक्तियों को प्रेरणा दी और वे भी हरिजन सेवा के कार्य में लग गये।

हरिजनों द्वार के लिये किये ये इन प्रयासों का ही परिणाम थ कि हरिजन भी संगठित होकर अपनी कुछ मांगे उठाने लगे थे। भरतपुर शहर के हरिजनों ने मांग की थी कि उनकी मजदूरी वेतन बढाये जाये, उन्हें शिक्षा की सुविधाएं प्रदानकी जाये और उन्हें सार्वजनिक यातायात के साधनों के उपयोग का भी अधिकार हो। भरतपुर नगर परिषद ने इन मांगों पर विचार करने के लिये एक समिति नियुक्त की। इस समिति ने हरिजनों की शिक्षा के लिये एक शिक्षक नियुक्त किया गया। सरकार द्वारा इस तरह का कदम बाध्य होकर ही उठाया गया था। क्योंकि समाज सुधारकों द्वारा पहले से ही हरिजनों में शिक्षा के प्रसार का प्रयास किया जा रहा था। हरिजनों द्वारा सार्वजनिक यातायात के साधनों में बैठने की सुविधा वास्तव में एक ऐसी मांग थी जो दलितोंद्वार के लिये किये जा रहे सतत् प्रयासों की सफलता को उजागर करती थी। इससे पहले संभवतः वे भी इस बारे में सोच सकने की भी हिम्मत नहीं कर सकते थे। यद्यपि नगर परिषद ने उनकी इस मांग पर कहा थ कि वह नगर परिषद किसी व्यक्त को इस बात के लिये बाध्य नहीं कर सकती कि वह हरिजनों के समीप बैठे। इससे हरिजन लोग भी सहमत हो गये। इस तरह से उनकी यह मांग केवल मांग ही रह गई। लेकिन इसका सही महत्व इस रूप में है कि यह हरिजनों के परिवर्तित दृष्टिकोण को दर्शाती है।

इन प्रयासों के बावजूद दलितोंद्वार, जांत पांत के भेद को मिटाने में उद्देश्यों के अनुरूप सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसका एक मुख्य कारण तो उस समय का राजनीतिक वातावरण था उस समय सारे देश की प्राथमिकता राजनीतिक स्वंत्रता की प्राप्ति थी। इसलिये देश की अधिकांश रचनात्मक शक्ति उस ओर लगी हुई थी। दूसरा महत्वपूर्ण तत्व आर्य समाजियों का सनातन धर्मियों द्वारा विरोध था। अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली की अधिकांश हिंदू जनता का एक बडा हिस्सा सतनातन धर्मी था। इस वर्ग ने आर्य समाज की गतिविधियों के प्रति असंतोष ही जारि नहीं किया। वरन् आर्य समाज की प्रगति को रोकने के लिये हर संभव तरीके भी अपनाये गये।

जातीय जडता एवं कुष्ठाग्रस्त समाज किसी भी सुधार के प्रयास को जाति बहिष्कार के दण्ड से विफल करने का प्रयत्न करता था। आर्य समाजी सम्पर्क एवं हरिजनों को शिक्षित करने के कार्य का रूढिवादियों द्वारा विरोध निश्चय ही स्थानीय स्तर पर कार्यकर्ताओं के लिये समस्या उत्पन्न करते थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि दलित कही जाने वाली जातियों में आपसी मतभेद थे। चर्मकार अपने आपको मेहतरों से उंचा समझते थे ओर उनके साथ उठना बैठना और खान पान पसंद नहीं करते थे। कहा जा सकता है कि अभी उंची कही जाने वाली जातियों और नीची कही जाने वाली जातियों के लोग किसी बडे सामाजिक परिवर्तन के लिये तैयार नहीं थे।

1. रामानारायण चौधरी : हरिजनस इन करौली दी हिंदुस्तान टाईम्स, 3 नवम्बर 1933, साथ ही माणिक्य लाल वर्मा द्वारा 19.09.1929 को राजस्थान सेवा संघ को भेजा गय प्रतिवेदन

2. दी हिंदुस्तान टाईम्स, 14 अक्टूबर 1933

3. सत्यकेतु विद्यालंकार : आर्य समाज का इतिहास, भाग–2, पृ. 91

4. वही पृ. 455

5. वही

6. लुई फिशर : दी लाईफ ऑफ महात्मा गांधी, पृ. 164

7. वही

8. नवयुग संदेश : भरतपुर की भूली बिसरी विभूतियों का अंक, वर्ष 46, अंक प्रथम, पृ. 8, 23 और 33

9. पृ.140–143, फाइल नं. 147/सीरु1, बस्ता नं. 10, ग्रुप अ आर आर अभिलेखागार, बीकानेर

10. वही

11. नवयुग संदेशः भरतपुर की भूली बिसरी विभूतियों का अंक, वर्ष 46 अंक प्रथम, पृ 20

12. नवयुग संदेशः भरतपुर की भूली बिसरी विभूतियों का अंक, वर्ष 46 अंक प्रथम, पृ 31,34

13. समनेश जोशी : राजस्थान में स्वत्रंता संग्राम के सेनानी, पृ 809, भरतपुर का स्वतंत्रता संग्राम पृ 27 ; लेखक मण्डल– चिंतामणी शुक्ल, मोहन लाल मधुकर और काशीनाथ गुप्तद्ध

14. आर्य समाज का इतिहास, भाग 2, पृ 498

15. करौली के ठाकुर ओंकार सिंह द्वारा राजस्थान हरिजन सेवक संघ जयपुर के मंत्री को लिखे पत्र से 10.11.1941

16. दी टाईम्स ऑफ इण्डिया 25 अप्रैल 1933

17. फाइल नं. सी/1, पृ 19778, बस्ता नं. 9 क्र. सं. 139, ग्रुप ए भरतपुर कॉन्फीडेन्शियल आर आर अभिलेखागार बीकानेर

18. वही

19. बयाना कस्बे में सनातन धर्मियों ने आर्य समाजियों द्वारा मूर्ति पूजा की खिलाफत को धर्म विरूद्व मानकर पुलिस में रिर्पो दर्ज कराई। पृ 240, इन्टेलीजेंस ब्रांच ऑफिसर ऑफ आगरा रिपोर्टेड टू भरतपुर पुलिस, फाइल नं. 230 बस्ता नं. 9 ग्रुप ए आर आर अभिलेखागारा बीकानेर

20. करौली में नरसिंह दास गुप्ता को हरिजन पाठशालाएं संचालित करे पर जाति बहिष्कार की धमकी दी गई। भरतपुर में युगल किशोर चतुर्वेदी के कुछ रिश्तेदारों ने उनके परिवार से नाराज होकर उनके यहीं आना जाना छोड दिया। युगल किशोर चतुर्वेद अभिनंदन ग्रुंथ पृ 51

सार

अस्पृश्यता की प्रथा भारत के अन्य भागों की ही तरह मत्स्य क्षेत्र के चारों राज्यों, भरतपुर, अलवर, धौलपुर और करौली में अपने सबसे बुरे रूप में विद्यमान थी। इस प्रथा के कारण क्षेत्र में हिंदू समाज का एक बडा हिस्सा सभी मानवीय अधिकारों से वचिति एवं पददलित था। सार्वजनिक स्थानों पर इनसे भेदभाव किया जाता था उन्हें निम्न समझा जाता थ इनके बच्चों को शिक्षा ग्रहण करने का कोई अवसर नहीं था। अंग्रेजी शासनकाल में अनेकानेक कारणों से इस कुप्रथा का निवारण करना आवश्यक हो गया था। क्षेत्र में इस दिशा में सर्वप्रथम पहल आर्य समाज ने की। प्रसिद्व आर्य समाजी नेता स्वामी श्रद्धांनद ने विधिपूर्वक दलितोंद्वार सभा की स्थापना कर अपनी पूरी शकित इसमें लगा दी। इसके पश्चात क्षेत्र में सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं कांग्रेसी कार्यकर्ताओं ने भी इस क्षेत्र में कार्य प्रारंभ किया। कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता गांधी ने अस्पृश्यता की घोर निंदा की। दलितोद्वार के लिये चारों राज्यों में हरिजन सेवक समितियां बनाई। क्षेत्र में कार्यरत सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र के कार्यक्ता बाध्य अलग अलग नहीं थे। इन कार्यकर्ताओं ने बडे परिश्रम से विपरित परिस्थितियों में जनता क बीच अस्पृश्यता के विरूद्व जागरूकता पैदा करने का प्रयास किया। इन प्रयत्नों के कुछ सार्थक परिणाम भी दृष्टिगोचर हुए। हरिजन बालकों की शिक्षा के लिये कार्यकर्ताओं की ओर से ही नहीं वरन् राज्य की ओर से भी प्रयास किये गये। भरतपुर के दृष्टांत से हरिजनों में भी चेतना के किंचित लक्षण प्रकट हुए। परंत साररूप में कहा जा सकता है कि दलितोंद्वार के प्रयासों को अधिक सफलता नहीं मिली। सीमिति संसाधन सामाजिक रूढियों से आबद्व जडताग्रस्त समाज स्वयं इन कोशिशों को जाति बहिष्कार, धर्म पर आक्रमण की धमकियों से विफल करने की कोशिश करता था। तत्काली राजनीतिक वातावरण, जिसकी प्राथमिकता राजनीतिक स्वत्रंता थी,भी इन प्रयासों की सीमिति सफलता के लिये उत्तरदायी है।